International Journal of Creative Research Thoughts
Volume 1, Issue.11, November 2013 *ISSN:-2320-2882*

ORIGINAL ARTICLE

चार्वाक आचार मीमांसा–एक समीक्षात्मक दृष्टि

डॉ. जितेन्द्र शर्मा

एसोसियेट प्रोफेसर–दर्शनशास्त्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट,

आलेख सार

"प्रस्तुत शोध आलेख में चार्वाक दार्शनिकों के आचारशास्त्र की नीर–क्षीर मीमांसा प्रस्तुत की गयी है। साथ ही वैश्विक परिदृश्य में इस भोगवादी दर्शन की वर्तमान प्रासंगिकता पर भी तटस्थ भाव से समीक्षा की गयी है। वस्तुतः जिस शास्त्र में कोई मान्यता नहीं कोई सामान्य नियम नहीं, ईश्वर, धर्म समाज के द्वारा दी गयी व्यवस्था के प्रति श्रद्धा न हो और न किसी प्रकार का नियन्त्रण या संयम हो, उस सिद्धान्त को अनुचित ही कहा जायेगा। यदि कोई आदर्श नहीं हो तो उन्नति और अवनति का भी प्रश्न नहीं रहता। यह विश्व के आदर्शों को चूर–चूर कर देता है। इस सिद्धान्त पर चलने वाला समाज उन्नति नहीं कर पायेगा। सार रूप में कहा जा सकता है कि चार्वाक दर्शन का आचारशास्त्र सामाजिक उत्थान के मार्ग में सर्वथा बाधक हैं। नैतिक मान्यताओं को परित्याग करना कथमपि श्रेयस्कर नहीं है।"

"यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्। ऋण कृत्वा घृतं पीवेत्।।" चार्वाक आचार मीमांसा का सारतत्व। एक ऐसा अर्थदर्शन जिसने दिव्यात्मा मनु य को बना दिया अर्थपशु और बाजार को बना दिया भोगवाद और देहवाद का खुला चारागाह। इससे प्रभावित साहित्य और समाज ने उधार लेकर धी पीने की सीख देने वाला एक नया पंथ प्रारम्भ किया। इस साहित्य ने अमेरिका के मध्यम वर्ग में अधाधुंध और वेशुमार कर्ज लेने की मानसिकता तैयार की। ये रचनाकार इस बात पर बल देते हैं कि कभी भी पैसे के लिये काम मत करो। ऐसी परिस्थिति रचो कि पैसा तुम्हारे लिये काम करे– *'डोन्ट वर्क फार मनी लेट मनी वर्क फार यू'*। चार्वाक अर्थदर्शनकी कोख से पैदा हुई इस भोगवादी मानसिकता ने विश्व के बेहद शक्ति

Please cite this Article as : डॉ. जितेन्द्र शर्मा, चार्वाक आचार मीमांसा–एक समीक्षात्मक दृष्टि : International Journal Of Creative Research Thoughts, Volume 1, Issue.11, November 2013

सम्पन्न देश अमेरिका को एक हीन, दुर्बल और आत्मसंशयी देश बना दिया। इस दर्शन ने अमेरिका के मध्यम वर्ग में ऐसी मानसिकता पैदा की कि अंधाधुध कर्ज लो और उससे गाड़ी, मकान आदि खरीदो। 'बोया पेड़ बबूल का आम कहॉ से होय' कर्ज लेने की भारी मॉग और उसकी कमतर होती अदायगी से बैंकों की हालत खराब हो गयी। बैंक दीवालिया हो गये और यहीं से अमेरिकी अर्थव्यवस्था में मंदी की शुरूआत हुई। 'तृष्णा न जीर्णाः वयमेव जीर्णाः। भोगा न भुक्ताः वयमेवभुक्ताः' का भतृहरि का आप्तवचन वैश्विक स्तर पर फलित हुआ। पाश्चात्य देशों में इस मोहक परन्तु घातक अर्थदर्शन ने अर्थशास्त्र की नींव बुलबुलों पर धर दी जो कभी भी फट जाते हैं और वहॉ का अर्थशास्त्र भरभराकर गिर जाता है।

उक्त पृष्ठभूमि के साथ चार्वाक नीति मीमांसा की नीर–क्षीर समीक्षा हेतु आइये सर्वप्रथम चार्वाक नैतिक दर्शन के प्रमुख पड़ावों पर एक दृष्टि डालें–

मानव जीवन का चरम लक्ष्य क्या है? तथा मनुष्य को कौन से कर्म करना चाहिये? इन प्रश्नों पर चार्वाक दर्शन के विचार परलोक में आस्था रखने वाले सभी सिद्धान्तों के विरूद्ध भयंकर प्रतिक्रिया है। चार्वाक दर्शन की प्रमाण मीमांसा एवं तत्वमीमांसा का प्रत्यक्ष प्रभाव उनकी आचार–मीमांसा पर पड़ा परिणाम स्वरूप वे परलोक विषयक् सभी मान्यताओं को निरी मूर्खता समझने लगे। "चार्वाक केवल इस जीवन में वैशयिक सुख की प्राप्ति को ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य मानते हैं। जब मरण के उपरान्त आत्मा का अस्तित्व ही नहीं रहता तब स्वर्ग मोक्ष अथवा निर्वाण का प्रश्न ही नहीं उठता।[1] मृत्यु के बाद आत्मा का जन्म नहीं होता, इसलिये पुनर्जन्म भी काल्पनिक वस्तु है। स्वर्ग, नरक, हवन, दान, पुण्य, पाप इत्यादि की अवधारणा मूर्ख पण्डितों के व्यर्थ प्रलाप हैं।

"न स्वर्गों नापवर्गो वा नैवात्मा पारलौकिकः।
नैव वर्णाश्रमादीनां क्रियाश्च फलदयिकाः।।
अग्निहोत्रं त्रयो वेदस्त्रिदण्डं भस्म गुंठनम्।
बुद्धि पौरूष हीनानां जीव केति वृहस्पतिः।।
त्रयो वेदस्य कर्तारो भण्डधूर्त निशाचराः।
जर्भरी तुर्फरीत्यादि पण्डितानांवचः स्मृतम्।।[2]

वेदों की रचना धूर्त, भण्ड और निशाचर पण्डितों ने स्वार्थ सिद्धि के लिये किया था। अतः वेद पर आधारित धर्म को अस्वीकार करना चार्वाक के लिये स्वाभाविक ही था। जहॉ तक मानव जीवन के लक्ष्य का प्रश्न है। चार्वाक धर्म और मोक्ष को पुरूषार्थ मानते ही नहीं। चूँकि अर्थोपार्जन से काम की तृप्ति में सहायता मिलती है। अतएव साधन रूप से अर्थ को भी मनुष्य का पुरूषार्थ माना जा सकता है। 'अर्थकामौपुरूषार्थो'[3] काम ही जीवन का परम पुरूषार्थ है। स्त्री आदि के आलिंगनादि से उत्पन्न सुख ही पुरूषार्थ है (दूसरा कुछ पुरूषार्थ नहीं)

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा धृतं पीवेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनम् कुतः।।[4]

अर्थात् जब तक जीओ सुख से जीओ। कर्ज लेकर घी पीओ। इस देह या शरीर के भस्मीभूत हो जाने पर पुनरागमन कहॉ? वस्तुतः पुनर्जन्म में विश्वास एक बकवास मात्र है। इहलौकिक सुख का परित्याग कर पारलौकिक सुख का यत्न करना हस्तगत अवलेह का त्याग कर कोहनी चाटने के समान है। हम लोगों का अस्तित्व शरीर में तथा वर्तमान जीवन तक ही सीमित है। अतः इस शरीर के द्वारा जो सुख प्राप्त हो सकता है वही हमारा एकमात्र लक्ष्य होना चाहिये। परलोक सुख की झूठी आशा में रहकर हमें इस जीवन के सुख को भी ठुकरा नहीं देना चाहिये। 'वरमद्यः कपोतः न वः मयूरः'[5]

अब, आइये इस तथ्य की नीर–क्षीर विवेचना करें कि उक्त अर्थदर्शन और अनैतिकतावादी आचारशास्त्र प्राणिमात्र के सन्दर्भ में कितना क्षेमकर है।

1. जहॉ तक याज्ञिक कर्मकाण्ड का वि ाय है, यज्ञ में पशुबलि दिये जाने का प्रश्न है? इसका खुला विरोध करते हुये चार्वाक कहता है कि पुरोहितों का यदि वास्तविक विश्वास है कि यज्ञ में बलिदान किया हुआ पशु स्वर्ग पहुॅच जाता है तो वो क्यों नहीं पशुओं के बदले मॉ–बाप की बलि कर देते हैं ताकि वे स्वर्ग जा सकें।

   पशुश्चेन्निहतः स्वर्गं ज्योति टोमे गमि यति।
   स्वपिता यजमानेन तत्र कस्मान् न हिंस्यते।।

   याज्ञिक हिंसा का इतना प्रबल विरोध चार्वाक आचार दर्शन को युगान्तकारी वैज्ञानिक दर्शन की कोटि में खड़ा कर देता है। एक ऐसा दर्शन जो धर्माडम्बर और उसकी सड़ी–गली मान्यताओं को एक सिरे से खारिज कर समाज को स्वस्थ दिशा देता है।

पशुबलि का विरोध करते हुये यहॉ चार्वाक दार्शनिक एक सच्चा समाज सुधारक एवं पथ–प्रदर्शक प्रतीत होता है। उनकी यह ौली कबीर की उस खरी–खोटी बेबाक शैली सदृश है जब वे मासांहार का निषेध करते हैं–

बकरी पाती खात है ताकी काढ़ी खाल।
जे नर बकरी खात हैं, ताको कौन हवाल।।

निजी हितों के लिये किसी जीव की हत्या करना घोर अनैतिक कृत्य है। यह पारिस्थितिकी संतुलन के लिये भी कथमपि स्वीकार्य नहीं। चार्वाक नैतिक दर्शन का यह पक्ष सर्वथा लाघनीय और ग्राह्य है।

2. इसी तरह से यज्ञ और याज्ञिक कर्मकाण्ड के नाम पर भोली–भाली जनता का शोषण करना न केवल कालान्तर में आर्थिक बदहाली और वि ामता के कारण वर्गसंघर्ष को बढ़ावा देना है, बल्कि समतामूलक और परस्पर पूरकतामूलक समाज की स्थापना के आदर्श के सर्वथा विपरीत भी है। धर्म जब अन्धविश्वास का दामन पकड़ लेता है तभी से वह पतनोन्मुख होने लगता है। वैदिक धर्म को अन्धविश्वास एवं कर्मकाण्ड की तंग गलियों से निकालकर उसे वैज्ञानिक आधार प्रदान करने का श्रेय निश्चित रूप से चार्वाक दर्शन को जाता है। इन सन्दर्भों में चार्वाक आचार–मीमांसा लाघनीय एवं समादरणीय है।
3. "वरमद्यः कपोतः न वः मयूरात" के तर्क के आधार पर चार्वाक दार्शनिक वर्तमानकालिक सुख को वरेण्य मानते हुये भोगवाद और इहलौकिकवाद की स्थापना करता है, जो भौतिक जीवन में विकास का मूल आधार है। यह सिद्धान्त व्यक्ति को संसार से पलायन की सीख नहीं देता और न ही नाते–रिश्तों को मिथ्या ही बताता है। जो सुख की इच्छा ही नहीं करेगा भला वह संसार को सुखमय कैसे बना सकता है। बॉझ क्या जाने प्रसव की पीड़ा। चार्वाक नैतिक दर्शन का यह पक्ष भी अनुकरणीय है। परन्तु तस्वीर के दूसरे पहलू की भॉति चार्वाक आचार–मीमांसा का कुछ आत्मघाती पक्ष भी है। डॉ0 विद्या सागर सिंह का मत है "वस्तुतः जो मनु य यह मानता है कि मैं शरीर के अतिरिक्त कुछ नहीं हूॅ। जन्म से पहले मेरा कोई अस्तित्व नहीं था, मृत्यु के पश्चात् न रहेगा। उसके लिये यही लोक स्वर्ग है। मौत ही उसके जीवन का अंत है। ऐसे पुरूष के विचार अपने शरीर से परे जा ही

नहीं सकते। वह अवश्य ही ऋण लेकर घी पीयेगा। जब तक इस संसार में है अधिक से अधिक सुख प्राप्त करना ही चाहेगा। यदि इस प्रकार के मनुष्यों से संसार भर जाय तो सदाचार, परोपकार, अहिंसा आदि नैतिक मूल्य निरर्थक हो जायेंगे। अगर मनु य के मानसिक जीवन का मौलिक रूप जड़ है तो उसकी आत्मा, पुरूषत्व तथा उसके संकल्प की स्वतन्त्रता इत्यादि के प्रश्न ही नहीं उठते। यदि मनुष्य की स्वतन्त्रता भ्रमात्मक है तो नीति और आदर्शों का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता।[6]

चार्वाक द्वारा आत्मा की अमरता और ईश्वर के अस्तित्व को नकारना भी खंडजीवन दृष्टि है। पाश्चात्य बुद्धिवादी दार्शनिक कांट भी संकल्प की स्वतन्त्रता, आत्मा की अमरता और ईश्वर का अस्तित्व जैसी मान्यता को नैतिकता की पूर्वमान्यता घोषित करता है। कर्मफल नियन्ता और कर्माध्यक्ष के रूप में एक ऐसी सत्ता (ईश्वर) में विश्वास करना ही पड़ता है जो जीव को शुभ–अशुभ कर्मों के अनुसार फल प्रदान करे। 'शुभ अरू अशुभ करम अनुहारी। ईशदेयिं फल हृदय विचारी।' यही विश्वास तो जीवन संघर्ष में आकुल –व्याकुल व्यक्ति को नैतिक संबल प्रदान करता है। यदि कर्माध्यक्ष और कर्मफल नियंता के रूप में ईश्वर की सत्ता स्वीकार नहीं की जाती है तो नैतिक कर्तव्य पंथ पर अग्रसर होना बड़ा कठिन हो जायेगा।

चार्वाक दार्शनिक के अनुसार काम ही परम पुरूषार्थ है। उनके मत में सबसे अधिक पुरूषार्थ वही है जो किसी भी प्रकार से सुन्दर भोजन, सुन्दर वस्त्र और सुन्दर युवतियों को प्राप्त कर भोग–विलास करे। निश्चित रूप से भोगवादिता का यह आचारशास्त्र मानवीय चेतना को पतन के गम्भीर गह्वर में ढकेल देगा। देहवाद को बढ़ावा देते हुये कदाचित परस्त्रीगमन को भी मौन स्वीकृति प्रदान करेगा। 'बिनफेरे हम तेरे' और समलैंगिक सम्बन्धों को विधिक मान्यता दिये जाने की मॉग इसी भोगवादी मानसिकता की कुत्सित अभिव्यक्ति है। चार्वाक दार्शनिक इस बात को भूल जाता है कि भोगी एक ऐसे भिखारी की तरह होता है जिसकी मॉग कभी पूरी नहीं होती। वह घोर अतृप्ति और असन्तुष्टि की ज्वाला में यावज्जीवन जलता रहता है। कदाचित इसीलिये धन, पद, प्रतिष्ठा में डूबे मनु यों को ऋशि मूढ़ (मूर्ख) की संज्ञा देता है।

न साम्परायः प्रतिभाति बालं प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढ़म्।

अयं लोको नास्ति पर इति मानी पुनःपुनर्वशमापद्यते मे।।[7]

कदाचित यदि इसी चार्वाकी नैतिकता को रत्ना (रत्नावली) भी अंगीकार कर ली होती तो अपने कामुक पति (तुलसी) को देह एवं संसार की निस्सारता की सीख न देती–

हाड़–मांस मम चर्म सो तासो ऐसी प्रीति। हो जाती रघुनाथ से कट जाती भवभीति।

फलतः आज विश्व संस्कृति रामचरित मानस जैसे ग्रन्थ रत्न से वंचित होती। सनातन भारतीय संस्कृति और अध्यात्म का बेड़ा गर्क हो गया होता।

उक्त तथ्यों के बावजूद भी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की आड़ में कुछ व्याख्याकार चार्वाक के 'ऋणं कृत्वा घृतं पीवेत्' की भोगवादी नैतिकता को सार्वजनिक स्वीकृति प्रदान करने का झूठा स्वांग करते हैं। ऋण लेकर घी पीओ, शराब नहीं। यदि चार्वाक अनैतिकतावादी होते और सुखपूर्वक जीने के लिये कुछ भी कर गुजरने के लिये तैयार होते तो वैदिक युग में प्रचलित सोम(आज की शराब) पीने को कहते। चार्वाक लोक चिंतक था इसीलिये घी पीने को कहता है जिससे शरीर पुष्ट हो स्वस्थ्य हो आदि, आदि।।[8]

वैदिक युग में विशेश औषधीय वृक्षों के रस से तैयार किये गये सोमरस को आज की शराब कहना अपने ही रक्त सम्बन्धियों (मॉ, बहन और पुत्री) को कामुक निगाह से निहारने के सदृश है। आज की शराब जिसे पीने से व्यक्ति उन्मत्त हो जाता है। जो पीने वाले का शारीरिक, मानसिक और नैतिक पतन कर देती है उसे वैदिक युगीन सोमरस कहना उच्छंखल वाचालता के सिवा और कुछ नहीं है। सोमरस का शराबपान जैसे नकारात्मक प्रभाव का एक भी उदाहरण प्राप्त नहीं होता है। पुनः 'घृतं पिवेत्' को एक ही स्थान पर शाब्दिक और लाक्षणिक दोनों अर्थों में प्रयुक्त करना और इस आधार पर स्वास्थ्य रक्षा के पक्ष में वकालत करने वाले आत्मघाती तार्किक यह भूल जाते हैं कि चार्वाक स्त्री आलिंगन को परमपुरूषार्थ मानते हैं। उच्छृंखल कामवासना का खेल खेलने वाले अपना ओजस्, तेजस् और ब्रह्मस् गॅवाने वाले परम पुरूषार्थी? एड्स रोगी) कितने स्वस्थ्य रहते हैं, व्याख्याकार स्वयं जाकर देखे।

रह गयी बात ''ऋण कृत्वा घृतं पीवेत्'' अर्थदर्शन के निषेधात्मक वैश्विक प्रभाव की तो इसकी चर्चा लेखक ने आलेख के प्रारम्भ में ही कर दी है। फिर भी यह कहना कि चार्वाक ऋण लेने की बात करता है चोरी की नहीं। अतः उसकी नैतिकता लोकव्यवस्था की पक्षधर हैं।[9] उसी तरह से कुतर्क करना है जैसे यह तर्क करना कि शारीरिक भूख की तृप्ति के लिये सीमित मात्रा में परस्त्रीगमन चरित्र हीनता नहीं है। या पेट के लिये चोरी करना पाप नहीं है। भला जब सभी लोग कर्ज लेना ही प्रारम्भ कर देंगे तो एक दिन ऐसा आयेगा जब कर्ज देने वाला ही नहीं बचेगा। तब काहे की नैतिकता और कैसा सुखभोग?

भोगवादी नैतिकता के वैश्विक प्रभाव की चर्चा करते हुये अखण्ड ज्योति पत्रिका के लेख का यह अंश कितना प्रासंगिक है– आज मनु य की विचार शीलता में कहीं गत्यावरोध उत्पन्न हो गया है। कारणों की खोज करने पर एक ही तथ्य उभरकर सामने आता है कि गवेषु बुद्धि ने अपना आत्मविश्वास गॅवा दिया है। आत्मगरिमा को वह भूल बैठा है। बात यहीं तक सीमित नहीं रही। मनुष्य को अपने अविनाशी अस्तित्व तक पर संदेह होने लगा है। इस महाविनाशक चिन्तन की परिणति विवेकहीनता, अदूरदर्शिता से भरी कृतियों के रूप में सर्वत्र देखी जा सकती है। जीवन की इतिश्री जब शरीर के साथ ही होने वाली है तो फिर अगले जन्म की बात ही क्यों सोची जाय? जैसे भी बने अधिकाधिक उपयोग क्यों न किया जाय। आज वैश्विक स्तर पर फैले आतंकवाद और अराजकतावाद का वटवृक्ष इसी आत्मघाती अर्थदर्शन की नर्सरी की पौध है। इसी सुखवादी प्रवृत्ति पर नियन्त्रण रखने के लिये आज विश्व अहिंसा दिवस, नारी सशक्ती वर्ष, विश्वस्वास्थ्य दिवस मनाया जा रहा है।[10]

सन्दर्भ सूची

1. पाण्डेय प्रो0 संगम लाल, भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण, पृ ठ 84, सेन्ट्रल पब्लिसिंग हाउस, इलाहाबाद संस्करण 2002
2. माधवाचार्य (व्याख्याकार मधुसूदन सरस्वती) सर्वदर्शन संग्रह पृष्ठ–4।
3. अर्थ कामौपुरूषार्थो–27 बार्हस्पत्य सूत्र।

4. बार्हस्पत्य सूत्र, 85 सर्वदर्शन संग्रह।

5. माधव (सर्वदर्शन संग्रह)।

6. सिंह, डॉ0 विद्या सागर, चार्वाक एवं ह्यूम पृष्ठ 78 प्रकाशक–राजस्थानी ग्रन्थागार सोजती गेट– जोधपुर संस्करण 2010।

7. कठोपनिषद 1/2/6, गीताप्रेस गोरखपुर।

8. डॉ0 विवेक कुमार पाण्डेय का लेख–चार्वाक के नैतिक दर्शन का मूल्यांकन पृष्ठ 107 प्रकाशन– समाज धर्म एवं दर्शन। त्रैमासिक पत्रिका अंक अप्रैल 2012 से मार्च 2013।

9. वही पृष्ठ 109।

10. सिंह, डॉ0 विद्या सागर–भारतीय भौतिकवाद और मार्क्सवाद पृष्ठ 119 राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली संस्करण 2010